नाट्यशास्त्र का रस सिद्धान्त और फिल्मी संगीत

– डॉ. परमजीत कौर

विभागाध्यक्ष (संगीत वादन)

सनातन धर्म कॉलेज अम्बाला छावनी।

भरतमुनि का नाट्यशास्त्र भारत देश का एक ऐसा अद्भुत ग्रन्थ है जो अपने जन्य काल से साहित्य, नाट्य, नृत्य एवं संगीत को समझने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। रस के सिद्धान्त को नाट्यशास्त्र के छठे अध्याय में तथा भाव को सातवें अध्याय में वर्णित किया गया है। भरतमुनि एक श्लोक में लिखते हैं :–

तत्र विभावनु भाव व्यभिचारि संयोद्रसनिष्पति। (नाट्यशास्त्र)

अर्थात् विभावनुभाव, व्यभिचार मात्र के संयोग से रस की उत्पत्ति होती है। जिस प्रकार गुड़ से शक्कर पैदा होती है, ऐसे ही नाना भाव से रस। रस एक आनन्ददायी चेतना है। इसका आधार स्थायी भाव है। रस के आधारभूत कारण को विभाव कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है – आलंबन विभाव तथा उद्दीपन विभाव। आलंबन – जो रस जागृति का मूल कारण है। यह भी दो प्रकार का होता है। एक आश्रय–आलंबन जैसे कृष्ण का राधा को देखकर मन में प्रेम भाव जागना तथा दूसरा विषय–आलंबन जैसे राधा जोकि प्रेम का विषय बनी। उद्दीपन विभाव – आलंबन विभाव के आधार पर किसी भाव के अभिभूत होने की परिस्थिति के अनुकूल होना है। अनुभाव प्रतीत के योग्य बनते हैं तथा भावों की सूचना देते हैं। यह चार प्रकार के हैं – (1) कायिक (2) वाचिक (3) मानसिक (4) जात्विक।

संचारी भाव का व्यभिचारी विभाव – मन में चलने वाले भाव – मोह, घृणा इत्यादि जिन्हें भरत ने मनोविकार कहा है, संख्या में 35 माने जाते हैं। स्थायी भाव बनाने में संचारी भाव की संख्या एक से अधिक होती है। आधुनिक समय में स्थायी भावों की संख्या 9 तथा रसों की 11 मानी जाती

है। भरतमुनि ने केवल 8 रसों को माना है। शांत रस को अब नौवां रस मान लिया गया है। वास्तव में वात्सल्य तथा भक्ति रस को श्रृंगार रस का हिस्सा मानकर रस की संख्या 9 मानी जाती है।

रस	स्थायी भाव
श्रृंगार	रति
हास्य	हास्य
करुण	शोक
वीर	उत्साह
रुद्र	क्रोध
भयानक	भय
विभत्स	घृणा
अद्‌भुत	विस्मय, आश्चर्य
शांत	निर्वेद
वात्सल्य	वात्सल्य, रति
भक्ति	रति, ईश्वर

अब प्रश्न उठता है कि रस का निष्पादन कैसे होता है? रस का मूल भोक्ता कौन है? – (1) कवि (2) श्रोता और दर्शक (3) काव्य/संगीत (4) नट–नटी/संगीतकार।

उपरोक्त भोक्ताओं में श्रोता या दर्शक का होना अति अनिवार्य है परन्तु शेष अवयवों की क्या भूमिका है। मुख्यतः चार टीकाकारों ने नाट्यशास्त्र पर टीकाकरण करते हुए उल्लेख किया है। प्रथम टीकाकार हैं – भट्टलोलक। ये रस के निष्पादन में उत्पाद तथा उत्पादक के संबंध से रस की उत्पत्ति होने का परिचय देते हैं परन्तु इसका अर्थ यह निकलता है कि रस पैदा होने की अनुभूति केवल गायक–वादक, नायक–नायिका, नृतक–नृतिका आदि को ही होती है। ऐसी परिस्थिति में श्रोता या दर्शक की क्या भूमिका होगी, इस पर कोई बल नहीं दिया गया। दूसरे टीकाकार आचार्य शुंकुक ने अनुमितिवाद को रस के उत्पादन का कारण माना है। अनुमान के लिए मन और बुद्धि के संयोग को आवश्यक माना गया है। परन्तु आचार्य शुंकुक बहुत–से प्रश्नों का उत्तर देने में विफल रहे हैं। तीसरे टीकाकार – भट्टनायक ने रस के सिद्धान्त की बहुत ही महत्त्वपूर्ण व्याख्या

की है। उनके भुक्तिवाद या भोगवाद के अनुसार जब भोज और भोजक के संयोग से संबंध स्थापित होता है तो रस का निष्पादन होता है। 3

रस की स्थिति परगत तथा स्वगत दोनों प्रकार की होती है। अर्थात् नायक–नायिका जो किसी भाव जैसे रति का आनन्द ले रहे हैं वैसा ही अनुभव श्रोता या दर्शक भी करने लगते हैं। मंच पर हो रहे निष्पादन चाहे नाट्य, नृत्य या संगीत के हों, जैसे अनुभूति कलाकार करते हैं वैसी ही श्रोता या दर्शक भी करने लगें तो इसे साधारणीकरण कहते हैं। ऐसी स्थिति में श्रोता रागद्वेष से मुक्त होकर कल्पनात्मक प्रतीती में गमन करने लगता है और उसकी तमो तथा रजो वृत्तियां समाप्त होकर सात्वत्ता को प्राप्त करती हैं। भट्टनायक ने अन्य टीकाकार – भट्टलोलक, शुंकुक तथा अभिनवगुप्त की आलोचना की है। चौथे टीकाकार अभिनवगुप्त ने भट्टनायक की आलोचना किए बिना साधारणीकरण के सिद्धान्त को माना है परन्तु अपना नया सिद्धान्त अभिव्यक्तिवाद दिया है। उनके अनुसार जब संयोग से व्यंज और व्यंजक संबंध बनता है तब अभिव्यक्ति से रस निष्पादित होता है। दूसरे शब्दों में भाव वस्तु में पहले से ही उपस्थित है, उनका संचार अभिव्यक्ति द्वारा होता है। चावल का भात बन जाना अर्थात् अचेतन मन का एकाग्रता में आना अभिव्यक्ति है। चित की एकाग्रता के कारण तमो तथा रजो गुणों का शमन होता है और सात्विक गुणों का संचालन होता है।

उपरोक्त चर्चा से फिर भी विवाद बना हुआ है कि रस का स्त्रोत कलाकार है एवं उसकी कृति या श्रोता या दर्शक। विल्यम वर्डसवर्थ ने इसका निवारण करते हुए इसका श्रेय दोनों को दिया है :–

Half created, half perceived

अर्थात् आधा कलाकार की कृति में है और आधा देखने वाले पर निर्भर करता है। जब हम किसी नाट्यशाला में दुखान्त दृश्य देखते हुए नायक के साथ सहृदय हो जाते हैं, उसकी दुखान्त कहानी के अन्त में हमारा मन भी हल्का हो जाता है जिसे अरस्तु ; ।तपेजवजसमद्ध ने बंजींतेपे यानि शुद्धीकरण कहा है। हमारे टीकाकारों ने इसी शुद्धीकरण को मन का सात्विक हो जाना बताया है। वास्तव में किसी नाटक, फिल्म, गायन–वादन या नृत्य का उद्देश्य ही मन का शुद्धीकरण या सात्विक करना है, जिसे हम आनन्द कहते हैं। 4

संगीत में रस की विवेचना :

भरतमुनि ने चार प्रधान रस माने हैं – शृंगार, रौद्र, वीर एवं विभत्स। अन्य रस उपरोक्त रसों के समावेश से बनकर नौ रस के रूप में जाने जाते हैं। संगीत में भी शृंगार, वीर, करुण और शांत, इन चार रसों में उपर्युक्त नौ रसों का समावेश माना गया है। संगीत में स्वरों से कौन से रस उत्पन्न होते हैं, निम्न श्लोक में वर्णित है :–

''सरी वीरेद्भूते रौद्रे धा वीभत्से भयानके।

कार्यो गनी तु करुणाहास्य शृगारयोर्मयी।। (नाट्यशास्त्र)

अर्थात् –

सा, रे = वीर, रौद्र तथा अद्भुत रसों के पोषक हैं।

ध = वीभत्स तथा भयानक रसों के पोषक हैं।

ग, नि = करुण रस के पोषक हैं।

म, प = हास्य एवं शृंगार रसों के पोषक हैं।''1

इसी प्रकार भातखण्डे जी ने हिन्दुस्तानी संगीत में रसों के समावेश के लिए रागों को तीन समूह में बांटा है।

परन्तु यह भी सत्य है कि केवल एक स्वर से एक रस की उत्पत्ति नहीं हो सकती। शास्त्रीय स्वर योजना तथा वातावरण के होते हुए श्रोताओं के मनोभाव को समझकर ही उपर्युक्त रस की उत्पत्ति की जा सकती है। एक ही शब्द 'आओ' का उच्चारण जब शृंगारिक स्वरों में होगा तो शृंगार रस निष्पादित होगा, जब करुण स्वरों में तो करुण रस, जब चुनौती भरे स्वरों में तो वीर रस। इसी प्रकार ताल और लय भी स्वरों से मिलकर संगीत में रस की उत्पत्ति करते हैं (संगीत विशारद, 548)। ''जिस प्रकार व्यंजनों में शब्द और शब्द से वाक्य की रचना होती है और वाक्य का अर्थ रसोद्रक के कारण होता है, उसी प्रकार पाटाक्षरों (ताल वाद्यों पर होने वाले आघात) के संयोग से ताल–वाद्यों के बोल बनते हैं और बोलों से विभिन्न गतियों या चालों का 5

स्वरूप निर्मित होकर एक निश्चित रस का अविर्भाव होता है। उत्कृष्ट तबला वादक इन चालों के सम्यक प्रयोग से गीत के विश्राम काल और उत्थान काल में ऐसा सौन्दर्य भर देते हैं कि गीत और उसके अनुवर्ती वाद्यों को समुचित भाव और रस उत्पन्न करने में सहायता मिलती है।[2]

नृत्य में भी अपने हाव–भाव तथा काल के द्वारा रस की सृष्टि करने के गुण हैं। नृतक अपनी भाव–भंगिमाओं द्वारा बिना किसी स्वर वाद्य या ताल वाद्य के शृंगार, हास्य, करुण या शांत रस का सम्प्रेषण कर सकता है। जब हम फिल्मी संगीत की बात करते हैं, सिनेमा घरों में पर्दे पर एक साथ अभिनय, नृत्य तथा गायन द्वारा सभी रसों का संचार करना अधिक कठिन नहीं होता और उसका प्रभाव भी ज़्यादा रहता है। गाना किस परिस्थिति में गाया गया है, कहानी कैसी है, गाने के बोल कैसे हैं, अभिनय करने वाला कलाकार अपनी भूमिका में कितना सापेक्ष है, इत्यादि बातों पर निर्भर करता है कि गाने का श्रोताओं या दर्शकों पर कैसा प्रभाव पड़ेगा।

फिल्मों में ध्वनि संगीत का प्रयोग दो प्रकार से किया जाता है। प्रथम, संगीत–ध्वनि प्रभाव के लिए शोकमयी वातावरण को सृजित करने के लिए शहनाई, वीरता जागृत करने के लिए नगाड़ा या तुराहे इत्यादि। आकाशवाणी या किसी मायावी प्रभाव के लिए विलक्षण ध्वनियों का प्रयोग होता है। ध्वनि प्रभाव सभी रसों की सृष्टि करने में सहायक होता है। शृंगार, वीर, करुणा, शांत इत्यादि रसों के पोषक फिल्म तथा संगीत द्वारा मानव हृदय में स्थित स्थायी भावों को उद्वेलित कर आनन्द की अनुभूति कराने में सक्षम है। ध्वनि का दूसरा प्रभाव शुद्ध संगीत है। भरतमुनि ने नाटक में प्रयोग होने वाले ''गीत को नाट्य की शैया कहा है। अर्थात् 'नाटक' की एकरूपता में थके हुए मन को विश्राम देने के लिए नाटक के बीच में गीत, वाद्य या नृत्य का आयोजन किया जाता है और जब तक यह संगीत चलता है, उतने काल तक नाट्य को भी विश्राम मिल जाता है।''3 फिल्मों में लयबद्ध संगठन के लिए गानों का प्रबन्ध इस प्रकार होता है मानो सभी गाने एक ही डोरी में गुंथे हों, बावजूद इसके, एक ही फिल्म के सभी गानों में अलग–अलग राग–ताल प्रयुक्त हों। वर्तमान संगीत में ऐसा दिखाई नहीं देता। फिल्मों के इंबाहतवनदक संगीत का अर्थ भी एक संवेदनशील वातावरण तैयार करना होता है। 6

इसे वर्णात्मक या छंततंजपअम संगीत कहते हैं। रस प्रधान लयात्मक गानों का विवरण इस प्रकार है :–

शृंगार रस	–	संयोग – दो जाने अजनबी चले बांधने बंधन (विवाह)
वियोग	–	ऐ जाते हुए लम्हो ज़रा ठहरो (बार्डर)
शांत रस	–	ऐ मालिक तेरे बंदे हम, ऐसे हों हमारे करम (दो आंखें बारह हाथ)

करुण रस – मैं कमज़ोर औरत, ये मेरी कहानी, मेरे आंसुओं से है गंगा में पानी। (प्रेम ग्रन्थ)

हास्य रस – शादी करके फंस गया यार, अच्छा खासा था कुंवारा (जुदाई)

विभत्स (घृणा) – धुआं धुआं धुआं धुआं (मिशन कश्मीर)

रौद्र – प्रतिघात की ज्वाला जले, प्रतिशोध जब लेने चले (अंजाम)

अद्‌भुत – लंदन देखा, पैरिस देखा और देखा जापान (परदेश)

वात्सल्य – कल जिसने जन्म यहां पाया, कल जिसको झूले झुलाया (विवाह)

भयानक – गुमनाम है कोई, बदनाम है कोई, किसको खबर कौन है वो (गुमनाम)

नाट्यशास्त्र की नाट्य परम्परा से ही फिल्मों का जन्म हुआ है। आज भी भारतीय पृष्ठभूमि में एक फिल्म निदेशक नाट्यशास्त्र से बहुत कुछ ग्रहण कर सकता है। श्रोता या दर्शक को रिझाने के लिए कौन–कौन सी आवश्यक बातें हैं, सभी नाट्यशास्त्र में दी गई हैं। जहां तक आज के फिल्मी संगीत का प्रश्न है, शास्त्रीय संगीत के अल्प प्रयोग से गानों का टिकाऊपन कम हुआ है। केवल अच्छे शब्दों के चुनाव से, सटीक संगीत के अभाव में सदाबहार गीत नहीं बन सकते। संगीत को संवेदनशील तथा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्तरीय बनाने के लिए पुराने फिल्मी संगीत को पुनः खोजना होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि :

1 बसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ–548

2 वही, पृष्ठ–556

3 वही, पृष्ठ–726